P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-7* (Part-2) March- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

चीनी यात्रियों के यात्रा वृत्तांतों में उल्लिखित शूद्रों की दशा पर सूत्र साहित्य एवं स्मृति ग्रंथों का प्रभाव : एक अध्ययन

श्रीराम शर्मा
शोधार्थी,
इतिहास
इतिहास एवं भारतीय संस्कृति विभाग,
राजस्थान विश्वविद्यालय,
जयपुर, राजस्थान, भारत

सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र में प्राचीन भारत में यात्रा करने वाले चीनी यात्रियों द्वारा भारत में शूद्रों की दशा पर जो विवरण उपलब्ध कराया गया है, उस पर स्मृति एवं सूत्र ग्रंथों में उपबन्धित शूद्रों के कर्तव्य एवं विधि–निषेधों का कितना प्रभाव रहा, पर विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। चीनी यात्रियों के भ्रमण के समय के गुप्त एवं हर्षकालीन भारत में शूद्रों को निम्नस्तरीय एवं संस्कारविहीन समझा जाता था। उनसे धार्मिक भेदभाव, राजनैतिक विभेद एवं नैतिक स्तर पर हीनता का व्यवहार किया जाता था। सूत्रों एवं स्मृतियों में उनकी जीविका को ऊँचे वर्णों की सेवा एवं शुश्रूषा पर निर्भर बताया गया है। सूत्रकारों की दंड व्यवस्था में भी उनका निम्न स्थान बताया गया है। न ही उन्हें राजनीतिक संगठनों में स्थान दिया गया। शूद्र शिक्षा भी नहीं प्राप्त कर सकते थे। इस प्रकार उपर्युक्त विवरण से दासों एवं शूद्रों से घृणा व नफरत करने के सामाजिक प्रचलन के बारे में ज्ञान होता है।

ह्वेनसांग एवं फाहियान नामक चीनी यात्रियों द्वारा प्रस्तुत विवरण भी सूत्र एवं स्मृति ग्रंथों का प्रतिबिम्ब प्रतीत होता है। ह्वेनसांग द्वारा शूद्रों को कृषक जाति का बताना, उन्हें अछूत समझना, फाहियान द्वारा उनका नगर के बाहर निवास, चलते समय लकड़िया बजाना आदि विवरण सूत्रों में उल्लिखित जीवन शैली पर ही प्रकाश डालता है। इत्सिंग भी उनके अपवित्र होने, स्पर्श होने पर दूसरे वर्णों द्वारा स्नान करके पवित्र होना एवं वस्त्र बदलने का विवरण देता है।

मुख्य शब्द : आपद्धर्म, शूद्र, स्मृति ग्रंथ, गृह्यसूत्र, चांडाल, प्रतिलोम, अनुलोम, काश्तकार, निषाद, वर्णव्यवस्था, स्वर्गीय देवता।

प्रस्तावना

चीनी यात्री फाहियान, ह्वेनसांग, इत्सिंग आदि ने भारत भ्रमण करते हुए महत्वपूर्ण विवरण उपलब्ध कराया है। फाहियान ने गुप्तकाल में 399 ईस्वी से 414 ईस्वी तक, ह्वेनसांग ने हर्षकाल में 629 ईस्वी से 644 ईस्वी तक तथा इत्सिंग ने सातवीं सदी के उत्तरार्द्ध में भारत की यात्रा की। इन्होंने भारत में शूद्रों की दशा का वर्णन किया है। स्मृति एवं सूत्रग्रंथों में शूद्रों सहित विभिन्न वर्णों के कर्त्तव्य, आपद्धर्म, निषेध, नियम, विनियम आदि का संकलन है जो प्राचीन भारत की सामाजिक व्यवस्था के आधार थे।

अध्ययन का उद्देश्य

मेरे इस शोधपत्र का उद्देश्य यह ज्ञात करना है कि क्या स्मृति एवं सूत्र ग्रंथों में वर्णित शूद्रों के कर्तव्य, आपद्धर्म तथा अन्य नियम–विनियम के अनुसार ही चीनी यात्रा वृत्तांतों में उल्लिखित शूद्र जीवन निर्वाह करते थे अथवा क्या गुप्तकालीन एवं हर्षकालीन शूद्रों का जीवन स्मृति एवं सूत्रकालीन शूद्रों के जीवन का प्रतिबिंब था। इस शोधपत्र का उद्देश्य यह पड़ताल करना भी है कि स्मृति एवं सूत्र ग्रंथों का प्रभाव भारतीय सामाजिक व्यवस्था में कितनी गहराई तक व्याप्त था।

साहित्यावलोकन

इस शोधपत्र के लिए जेम्स लेग्गे की पुस्तक – ए रिकॉर्ड ऑफ बुद्धिस्टिक किंगडम्स, सेम्युल बील की पुस्तक–बुद्धिस्टिक रिकॉर्ड ऑफ द वेस्टर्न वर्ल्ड, एच.ए. गाइल्स की पुस्तक – द ट्रेवल्स ऑफ फाहियान एण्ड रिकार्ड ऑफ बुद्धिस्टिक किंगडम्स, मनुस्मृति, बौधायन, आपस्तम्ब, गौतम धर्मसूत्र, बृहस्पति, विष्णु स्मृति जैसे प्राथमिक एवं द्वितीयक स्रोतों जिनमें शूद्रों की दशा का वर्णन है, आदि से सहायता ली गई। इस सम्बन्ध में रामशरण शर्मा ने भी शूद्रों का प्राचीन

इतिहास लिखा है जयशंकर मिश्र द्वारा ''प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास,'' पी.वी. काणे द्वारा ''हिस्ट्री ऑफ धर्मशास्त्र'' ल्यून–लो–चिआ द्वारा चायनीज सोर्सेज फॉर इण्डियन हिस्ट्री नामक पुस्तकें लिखी गयीं। इन ग्रन्थों का ध्येय शूद्रों की दशा का वर्णन तथा चीनी यात्रियों द्वारा भारत के बारे में दिये गये विवरण को प्रस्तुत करना रहा है। चीनी यात्रा वृत्तान्तों में उल्लिखित शूद्रों की दशा पर सूत्र एवं स्मृति ग्रन्थों का कितना प्रभाव था, इस पर केन्द्रीय कार्य अभी तक दृष्टिगोचर नहीं होता। यह प्रस्तुत शोध पत्र इसी कमी को पूर्ण करने का प्रयास करेगा। प्राचीन ग्रंथों में शूद्रों को अत्यन्त हेय समझा जाता था। वे सभी प्रकार के अधिकारों एवं संस्कारों से रहित थे। शूद्रों का जीवन उनके स्वामी की दया पर निर्भर करता था। विभिन्न ग्रंथों में उसके प्रति हीन भावों का वर्णन किया गया है। समाज में हेय स्थान, धार्मिक भेदभाव, राजनैतिक विभेद तथा नैतिक जीवन से सम्बन्धित विभेदकारी नियम उसकी निम्न स्थिति को प्रदर्शित करने वाले थे।

गौतम धर्मसूत्र में कहा गया है कि शूद्र का प्रधान कर्त्तव्य अपने से ऊँचे सभी वर्णों की सेवा करना था। उसकी जीविका उच्च वर्णों की सेवा और शुश्रूषा पर ही निर्भर करती थी।[1] शूद्र को प्रत्येक दृष्टि से ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य के ऊपर निर्भर रहना पड़ता था। उनके द्वारा फेंके गये जूते, चटाई, वस्त्र, छाता आदि का उपयोग करता था तथा उनके जूठन पर अपना जीवन निर्वाह करता था।[2]

सूत्रकारों की दंड व्यवस्था में शूद्रों का निम्न स्थान है। जैसे क्षत्रिय और वैश्य का अपमान करने पर ब्राह्मण पर क्रमशः पचास और पच्चीस कार्षापण का जुर्माना होता था, परंतु शूद्र के प्रति उसी अपराध में कोई दंड नहीं दिया जाता था।[3] बौधायन धर्मसूत्र में कहा गया है कि शूद्र की हत्या करने वाले को वही दण्ड मिलना चाहिए जो कौवे, उल्लू, मेढक एवं कुत्ते की हत्या करने वाले को मिलता है।[4]

यद्यपि पूर्वकालीन गृह्यसूत्रों में कहीं भी शूद्रों को दीक्षा संस्कार से वंचित करने का स्पष्ट उल्लेख नहीं है, फिर भी आपस्तम्ब धर्मसूत्र से पता चलता है कि उसे उपनयन और वेदाध्ययन की अनुमति नहीं दी गई थी।[5] शांखायन गृह्यसूत्र में किसी शूद्र और खासकर चांडाल की उपस्थिति को वेदपाठ बंद कर देने का पर्याप्त कारण माना गया है।[6] ऐसी स्थितियों को बौधायन और गौतम दोनों ही सभी प्रकार के अध्ययन के लिए बाधक मानते हैं।[7]

इस काल में शूद्रों को राजनीतिक संगठन में स्थान नहीं दिया गया क्योंकि आपस्तम्ब धर्म सूत्र ने अधिकारी रूप में केवल द्विजों को ही नियुक्त करने को कहा है। जैन ग्रंथ भी शूद्रों के राज्यकार्य में भाग लेने का उल्लेख नहीं करते।[8] उसे वेदाध्ययन और यज्ञ करने का अधिकार प्राप्त नहीं था, उसे न वेदमंत्रों को सुनने का अधिकार और न उच्चारण करने का अधिकार प्राप्त था। गौतम की व्यवस्था के अन्तर्गत यदि वह वैदिक मंत्रों का उच्चारण करे तो उसकी जिह्वा काट लेनी चाहिए। वैदिक मंत्र को सुनने वाले शूद्र के कानों में टीन या लाख का गला हुआ गरम पदार्थ भर देना चाहिए।[9] आपस्तम्ब के अनुसार उसके सामने वेद पाठ करना निषिद्ध था।[10]

उपनयन संस्कार न होने के कारण वह विद्या और शिक्षा प्राप्त करने का अधिकारी नहीं था। मंत्रहीन होने के कारण शूद्र यज्ञ भी नहीं कर सकता था एवं विद्या, याज्ञिक[11] इत्यादि कार्यों से पूर्णरूपेण वंचित कर दिया गया था। आपस्तम्ब धर्मसूत्र का विचार है कि यदि शूद्र कोई अच्छी बात कहे तो उसे ग्रहण कर लेना चाहिए।[12] गुरू को दक्षिणा देनी चाहिए भले ही वह शूद्र के घर से ली गई हो।[13] इस व्यवस्था द्वारा विचारकों ने शूद्रों की जनसंख्या पर दूरगामी नियंत्रण कर समाज में उनकी शक्ति और प्रभाव को बढ़ने से रोकने का प्रयास किया। उच्चवर्ण के लोग शूद्र कन्या से विवाह कर सकते थे। किन्तु शूद्र अपने से भिन्न वर्ण की कन्या से पुत्रोत्पन्न करे तो पतित समझा जाता था।[14]

इस प्रकार उपर्युक्त विवरण से दासों एवं शूद्रों से घृणा व नफरत करने के सामाजिक प्रचलन के बारे में ज्ञान होता है। उन पर तरह–तरह के प्रतिबंध लाद दिये गये थे। उपर्युक्त विवरण की पुष्टि चीनी यात्री ह्वेनसांग द्वारा प्रस्तुत विवरण से भी होती है। ह्वेनसांग ने लिखा है कि अर्हत ने जिस भूमि को अपने अध्यात्म के बल से प्राप्त किया था, उस भूमि पर 500 संघाराम स्थापित किये थे। वहाँ पर अन्य प्रदेशों से दीन पुरूष क्रय करके यहाँ के संन्यासियों की सेवा के लिए नियत कर दिये। मध्यान्तिक के स्वर्गवास होने पर वही सेवक लोग इस भूमि के स्वामी हो गये, परन्तु अन्यान्य प्रदेशों के लोग इन दासों से घृणा करते थे। इनके समाज में नहीं जाते थे। इन दासों को क्रितीय नाम से सम्बोधित करते थे।[15]

ह्वेनसांग उल्लेख करता है कि वर्णव्यवस्था में चौथे स्थान पर स्थित शूद्र कृषक[16] जाति के हैं। यह जाति भूमि खोदने, जोतने आदि में परिश्रम करती है।[17] इस प्रकार ह्वेनसांग के विवरण से स्पष्ट है कि उसने अपने भारत भ्रमण के दौरान शूद्रों को कृषि कार्य में नियोजित देखा। बड़ी संख्या में शूद्रों द्वारा कृषि कार्य करने के कारण ही उसने शूद्रों को कृषक जाति का बताया है। इस सम्बन्ध में उल्लेखनीय तथ्य यह है कि भारतीय ग्रंथों में भी शूद्रों को कृषि कार्य में लगाये जाने का विवरण प्राप्त होता है। वे शूद्रों के कृषि कार्य में लगाये जाने का विधान करते हैं।

खेती में श्रम की आवश्यकता केवल बड़े–बड़े कृषकों और गृहपतियों को ही नहीं थी बल्कि साधारण गृहस्थों को भी एकाध दास अथवा कर्मकारों की जरूरत होती थी। कृषकों के कर देने के कारण महाजनपदों अथवा बड़े राज्यों का जन्म हुआ जिनके अधिकारी वर्ग कर पर जीते थे और उत्पादन कार्य से मुक्त थे। उनकी सेवा और घरेलू काम के लिए भी दासों और कर्मकारों की आवश्यकता थी।

कौटिल्य का विचार है कि जब नयी बस्तियाँ बसायी जायें तो उस बस्ती में शूद्र और कृषक सहित सौ से पाँच सौ परिवार रहने चाहिए।[16] क्योंकि जिस बस्ती में शूद्र अधिक होते हैं वह बस्ती पूर्णतया फल देने वाली होती है तथा उसमें राज्य के सभी आरोपित भार सहन की

क्षमता होती है।[17] कौटिल्य के मत से राज्य में शूद्रों की जनसंख्या अधिक होनी चाहिए।[18]

शूद्रों को सर्वप्रथम कृषि कार्य में लगाने तथा स्वतन्त्र रूप से उनके कृषि करने की व्यवस्था कौटिल्य ने दी है।[19] इस विषय में डॉ. शर्मा का मत है कि मौर्यकाल में दास, शिल्पी, कर्मकार और आदिवासी शूद्र वर्ग के थे। इनका बड़े स्तर पर नियोजन किया गया था।[20] कृषि करने के लिए शूद्रों की कोटि में आने वाले कर्मकारों को राजा की ओर से बीज और बैल प्रदान किये जाते थे किन्तु इसके बदले में उन्हें उत्पादन का 1/4 तथा 1/5 कर के रूप में देना पड़ता था। कौटिल्य का कथन है कि शूद्रों को ग्राम की दक्षिणी सीमा पर बसाना चाहिए जिससे वे खेती का कार्य तथा अन्य व्यवसाय कर सकें।[21] शूद्र कर का भुगतान धन के रूप में नहीं बल्कि श्रम के रूप में करते थे।[22] कुछ ऐसे गांव भी होते थे जहां कर के बदले श्रमिकों की आपूर्ति होती थी।[23] मौर्योत्तर काल में शूद्रों और वैश्यों` बीच आर्थिक भेदभाव मिटते जा रहे थे, पर शूद्र मुख्यतया अलग–अलग भूस्वामियों के खेतों में कृषि मजदूर का कार्य कर रहे थे।

सातवीं सदी के पूर्वार्द्ध में शूद्रों को खेतिहरों के वर्ग के रूप में वर्णित किया है।[24] किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि यह महत्वपूर्ण परिवर्तन गुप्तकाल में हुआ होगा। कृषक वर्गों में बहुत बड़ा भाग शूद्र का था। गुप्तकाल में वाणिज्य को भी शूद्रों का कर्तव्य माना जाने लगा। याज्ञवल्क्य कहते हैं कि शूद्र द्विजाति की सेवा से अपनी आजीविका चलाने में असमर्थ हों तो वह वाणिज्य कर सकता है[25] बृहस्पति कहते हैं कि हर प्रकार की वस्तुओं की बिक्री शूद्रों का सामान्य कर्तव्य है। पुराणों में भी कहा गया है कि शूद्र क्रय–विक्रय और व्यापारिक लाभ से जीवन निर्वाह कर सकता है।[27]

पंचविश ब्राह्मण से स्पष्ट होता है कि शूद्रों का मुख्य व्यवसाय सेवाकर्म था। 'पादावनेजन' शूद्र की आजीविका का मुख्य साधन माना गया। कीथ के अनुसार शूद्र वर्ण के अन्तर्गत दास भी आते थे। उनके अनुसार शूद्र आर्यभूस्वामी के खेतों में कृषि दास के रूप में कार्य करते थे। किंतु खेती में कार्य करने वाले दासों अथवा कृषि दासों का उल्लेख संहिताओं में तथा ब्राह्मणों में नहीं मिलता। उत्तरवैदिक काल में अद्‌भुत औद्योगिक विकास हुआ। अनेक शिल्प तथा कलाओं का उदय हुआ और व्यवसाय में वृद्धि हुई। यजुर्वेद संहिता के पुरूषमेध खण्ड में अनेक व्यवसायों का उल्लेख है – कीनांश (कृषि), कर्मार (अनेक प्रकार की धातुओं से काम करने वाले), कुम्भकार इत्यादि। इससे स्पष्ट होता है कि ये विभिन्न व्यावसायिक वर्ण से सम्बन्धित हैं किन्तु परवर्ती काल में ये व्यवसाय शूद्र तथा अन्य प्रतिलोम जातियों के थे।

परम्परागत परिचर्या कर्म के अतिरिक्त विविध शिल्पों से जीविकोपार्जन करना शूद्र का कर्त्तव्य था। आपत्तिकाल में शूद्र वैश्यवृत्ति–कृषि, व्यापार एवं पशुपालन से जीविकोपार्जन कर सकता था। धर्मसूत्रों में अर्द्धसीरिन का उल्लेख है और उसे शूद्र कहा गया है। शूद्र शिल्प–व्यापार द्वारा धनोपार्जन के अतिरिक्त निधि के 1/6 भाग का भी अधिकारी होता है। वशिष्ठ धर्मसूत्र में कहा गया है कि ब्राह्मण जप और यज्ञ से, क्षत्रिय बाहुबल से तथा वैश्य और शूद्र धन से अपने कष्टों का निवारण करें। इससे स्पष्ट होता है कि वैश्य और शूद्र विविध व्यवसायों द्वारा धनोपार्जन की क्षमता रखते थे।

मौर्यकाल में शूद्र की आर्थिक स्थिति में निश्चय ही सुधार दिखाई देता है। सेवावृत्ति के अतिरिक्त उसके लिए कृषि, पशुपालन और वाणिज्य आदि आजीविका के साधन निर्दिष्ट किये गये हैं। कौटिल्य ने परिचर्या के अतिरिक्त वार्ता को भी शूद्र का व्यवसाय माना है। वार्ता के अन्तर्गत कृषि, पशुपालन एवं व्यापार–वाणिज्य आते हैं। एक प्रकार के खेती करने वाले शूद्र का उल्लेख अर्थशास्त्र में है। उसे कुटुम्बिन कहा गया है। उन्हें राज्य की ओर से मकान बनाने के लिए भूमि दी जाती थी तथा खेती करने के लिए खेत। सम्भवतः ये काश्तकार थे, स्वयं भूमि के मालिक नहीं। शूद्र इस काल में व्यापार भी करते थे। अधिकांश शूद्र कर्मकार थे। ये कर्मकार राज्य के विभिन्न काम करते थे। राज्य की भूमि जोतना, बंजर जमीन को खेती योग्य बनाना, भवन निर्माण कार्य करना। शूद्र एक बड़ी संख्या में दास एवं भृत्य के रूप में कार्य करते थे।

महाभारत में भी उल्लेख है कि अगर सेवावृत्ति से उनकी जीविका नहीं चल पाती थी तो वे अपनी भार्या और संतान की आजीविका व्यापार, पशुपालन और विभिन्न शिल्प को ग्रहण करके चलाते थे।[28] याज्ञवल्क्य के अनुसार यदि शूद्र स्ववृति से जीविकोपार्जन में असमर्थ है तो वाणिज्य व्यवसाय से जीविका चला सकता था। बृहस्पति और पारासर ने कृषि, शिल्प तथा वाणिज्य वृत्तियाँ शूद्र के लिए निर्धारित की हैं। शूद्र सामान्यतः उन वस्तुओं का क्रय–विक्रय करते थे जो द्विजाति के लोगों के लिए निषिद्ध है।

प्राचीन भारतीय समाज के विभिन्न पहलुओं का गम्भीरता से अध्ययन करने पर यह स्पष्ट परिलक्षित होता है कि उस समय अमीरी, गरीबी, उच्चता और निम्नता की खाई बनी हुई थी। गाइल्स लिखता है कि जिस समय चीनी यात्री भारत में आये उस सयम भी इस सामाजिक दोष के विषय में जानकारी प्राप्त हुई कि देश की आबादी में अछूतों का भी बड़ा हिस्सा सम्मिलित था। फाहियान के भ्रमण वृतांत से ज्ञात होता है कि पाँचवीं सदी के प्रारम्भ में भी अस्पृश्यता के संबंध में भारत की स्थिति ऐसी ही थी।[29] फाहियान के अनुसार समाज में अस्पृश्यता का प्रचलन था, इन्होंने अछूतों को 'चाण्डाल'[30] शब्द से सम्बोधित किया है जो नगरों और गाँवों के बाहर निवास करते थे। फाहियान के विवरणानुसार अस्पृश्यों को बस्ती से बाहर निवास करना पड़ता था। इसके अलावा ऐसी भी परम्परा प्रचलित थी कि जब कभी चाण्डाल बाजार में प्रवेश करता था, तब वह लकड़ियाँ पीटता हुआ चलता था जिससे लोग लकड़ियों की आवाज से अलग हट जायें तथा उनके स्पर्श से बच जायें।[31]

तत्कालीन स्मृतियों में अन्त्यज अथवा चाण्डाल को प्रतिलोम विवाह से उत्पन्न बताया गया है इनका मुख्य कार्य व्यवसाय आखेट करना अथवा मांस बेचना बताया गया है। अतः फाहियान के उपर्युक्त विवरण से ऐसा आभास होता है कि गुप्तकालीन समाज में अस्पृश्य वर्ग का अस्तित्व था। जैसाकि तत्कालीन स्मृति ग्रंथों में शूद्रों और अस्पृश्यों के बीच अन्तर का संकेत किया गया है।

मनु ने इसे निम्नतम मनुष्य माना है तथा याज्ञवल्क्य ने चाण्डाल को सर्वधर्म बहिष्कृत घोषित किया है।[32] फाहियान के उपर्युक्त विवरण की पुष्टि मनु द्वारा प्रस्तुत विवरण से भी होती है। मनु ने उल्लेख किया है कि चाण्डालों एवं खपचों को गांव के बाहर रहना चाहिए। उनके बर्तन अग्नि में तपाने पर भी प्रयोग में नहीं लाने चाहिए, उन्हें टूटे–फूटे बर्तन में ही भोजन करना चाहिए, उनके आभूषण लोहे के होने चाहिए, उन्हें लगातार घूमते रहना चाहिए, रात्रि में वे नगर या ग्राम के भीतर नहीं आ सकते हैं।[33]

चीनी यात्री ह्वेनसांग ने भी तत्कालीन समाज में अस्पृश्यता के प्रचलन का उल्लेख करते हुए कसाई, मछुआरे, नाचने वाले जल्लाद, भंगी आदि की गणना अस्पृश्य वर्ग के अन्तर्गत की है। ये शहर के बाहर निवास करते थे। उसके अनुसार ये पशुओं को मारकर बेचते थे, बधिक का कार्य करते थे, विष्ठा आदि उठाते थे तथा नगर के बाहर निवास करते थे। ह्वेनसांग ने आगे यह भी वर्णन किया है कि कसाई, मेहतर, मछुए, जल्लाद आदि के निवास स्थान पर पहचान के लिए चिह्न लगा दिया जाता है तथा वे नगर के बाहर रहने के लिए बाध्य किये जाते हैं तथा गाँवों और नगरों में आते–जाते समय बाँईं ओर दब कर चलते हैं।[34]

इसी प्रकार का उल्लेख बाणभट्ट के ग्रंथ कादम्बरी में भी किया गया है। बाण की कादम्बरी में जिस चाण्डाल स्त्री ने सुग्गे को लेकर राजा के दरबार में प्रवेश किया, उसने राजा को सचेत करने के लए कुछ दूर से ही हाथ में ली हुई बांस की छड़ी से फर्श पर प्रहार किया।[35] यह प्रथा अस्पृश्यों में साधारणतः प्रचलित थी। इस प्रकार की गतिविधि से वे उच्च जाति के लोगों को अपने आगमन से सावधान कर देते थे। शांखायन के गृह्यसूत्र में चांडाल को अपवित्र मानकर उसकी उपस्थिति को वेदपाठ बंद कर देने का पर्याप्त कारण माना गया है।[36] शतपथ ब्राह्मण कहता है कि शूद्र असत्य है, शूद्र श्रम है, किसी दीक्षित व्यक्ति को शूद्र से भाषण नहीं करना चाहिए। ऐतरेय ब्राह्मण में उल्लेख है कि शूद्र दूसरों से अनुशासित होता है, वह किसी भी आज्ञा पर उठता है, उसे कभी भी पीटा जा सकता है।[37] धर्मसूत्रों में सर्वप्रथम यह कहा गया कि शूद्र द्वारा स्पर्श किया गया भोजन दूषित हो जाता है। आपस्तम्ब और गौतम धर्मसूत्रों में ये नियम कठोर नहीं है जितने की बाद में आने वाले धर्मसूत्रों में, इस प्रकार इन विवरणों में, धर्मग्रंथों में अस्पृश्यता की अवधारणा प्रकट होती है जिसका दैनिक जीवन में आँखों देखा हाल चीनी यात्रियों ने अपने ग्रंथों में उल्लेख किया है।

चीनी यात्री इत्सिंग ने भी तत्कालीन समाज में भंगी और चाण्डाल जैसे अस्पृश्य लोगों का उल्लेख किया है। इनके साथ किये गये व्यवहार के संबंध में एक परम्परा का भी ज्ञान होता है। वे जिस मार्ग पर जाते, लकड़ियाँ बजाते थे जिससे उन्हें कोई स्पर्श नहीं कर सके और यदि भूल से उन्हें किसी ने स्पर्श कर लिया तो पवित्र होने के लिए उसे स्नान करना एवं वस्त्र बदलना पड़ता था।[38]

निम्न जातियों का उल्लेख करते हुए मनु उल्लेख करता है कि वे मृग आदि पशुओं का वध करके अपनी आजीविका चलाते थे।[39] कुछ निम्न जातियों का मुख्य कार्य मछली मारना तथा उसे बाजार में बेचकर आजीविका कमाना था।[40] इसी प्रकार का विवरण फाहियान भी प्रस्तुत करता है जिसमें वह उल्लेख करता है कि केवल चांडाल मछली मारते, मृगया करते और मांस बेचते हैं।

प्राचीन भारतीय समाज में चार प्रमुख जातियों के अतिरिक्त मिश्रित जातियों का भी अस्तित्व था। चीनी यात्री ह्वेनसांग ने इन मिश्रित जातियों की संख्या बहुत अधिक बतलाई है।[41] इनके अन्तर्गत निषाद, पारशव, पक्कुस आदि उल्लेखनीय हैं। ये वर्णशंकर जातियाँ स्वयं अस्पृश्य और निम्न श्रेणी की थी। स्मृतियों के सिद्धान्त के अनुसार ये मिश्रित अथवा अनुलोम एवं प्रतिलोम विवाहों का परिणाम थी। छान्दोग्योपनिषद् के अनुसार इनकी उत्पत्ति अनुलोम एवं प्रतिलोम जैसे अन्तर्जातीय विवाह से हुई थी।[42]

वायु पुराण तथा मत्स्य पुराण में देश के अनेक भागों में शूद्र राज्यों का उल्लेख है। चीनी यात्री ह्वेनसांग भी भारत में कतिपय शूद्र शासकों का उल्लेख करता है। ह्वेनसांग ने मतिपुर के राजा का उल्लेख करते हुए लिखा है कि वह शूद्र जाति का है एवं बौद्ध धर्म को नहीं मानता है। वह स्वर्गीय देवताओं की प्रतिष्ठा और पूजा करता है।[43] इससे शूद्रों की उच्च स्थिति का बोध होता है। इस यात्री के अनुसार दक्षिण में शूद्रों की स्थिति अपेक्षाकृत सुदृढ़ थी और शासन में भी उनका महत्वपूर्ण स्थान था। इससे यह स्पष्ट है कि शूद्रों ने अपनी स्थिति में बहुत उन्नति कर ली थी। ह्वेनसांग सिंध के शासक को भी शूद्र[44] जाति का बताता है।

निष्कर्ष

ये चीनी यात्री भारतीय परिवेश के लिए विदेशी होने के कारण पूर्णतः अनभिज्ञ थे। भारतीय सामाजिक–सांस्कृतिक दशा की पृष्ठभूमि का ज्ञान भी इन्हें पूर्व से नहीं था। न ही ये भारतीय समाज के किसी वर्ग विशेष के प्रति पूर्वाग्रह से ग्रसित थे। इन्होंने जो कुछ भी विवरण उपलब्ध कराया है, वह प्रत्यक्ष अनुभव तथा आँखों देखा हाल लिखा है। भारत के विभिन्न भागों में भ्रमण करते हुए इन्होंने शूद्रों की गतिविधियों को भी देखा तथा उसे लिखित रूप दिया।

अतः शूद्रों के बारे में इनके द्वारा लिखित विवरण से स्पष्ट है कि शूद्रों की जीवन दशा पर स्मृति एवं सूत्र ग्रंथों का व्यापक प्रभाव था। वे स्मृति ग्रंथों एवं सूत्रों में शूद्रों के लिए बताये गये कर्तव्य, आचार–विचार, आपद्धर्म, रहन–सहन आदि से सम्बन्धित नियमों का पूर्णरूप से अनुपालन कर रहे थे। इन चीनी यात्रियों द्वारा प्रस्तुत विवरण से स्मृति एवं सूत्रग्रंथों में उल्लिखित वर्णव्यवस्था संबंधित कारकों की ऐतिहासिक रूप से पुष्टि हो जाती है। चीनी यात्रा वृत्तांतों में शूद्रों की जीवनदशा पर कोई भी ऐसा विवरण नहीं आया जो स्मृति एवं सूत्र ग्रंथों से इतर हो। स्पष्ट है तत्कालीन शूद्र समाज पूर्णतः स्मृति एवं सूत्र ग्रंथों के बंधन में जकड़ा हुआ था।

अंत टिप्पणी

1. *गौतम धर्म सूत्र 1.57, शूद्राज इन एंशियन्ट इंडिया, पृष्ठ 69–70*
2. *वही, 10.60*
3. *गौतम 21.6–10*
4. *बौधायन धर्मसूत्र 1.10.19.1–6*
5. *आपस्तम्ब धर्मसूत्र, 1.1.1.6*
6. *शांखायन गृह्यसूत्र 4.7.33*
7. *बौधायन धर्मसूत्र, 1.11.21.15*
8. *आपस्तम्ब धर्म सूत्र, 2/3/6/22*
9. *गौतम धर्मसूत्र 12.4*
10. *आपस्तम्ब धर्मसूत्र 2/11/29/11–12*
11. *बौधायन धर्म सूत्र, 4.3*
12. *आपस्तम्ब धर्मसूत्र 2/11/29/11–12*
13. *वही, 1/2/7/20–21*
14. *गौतम धर्मसूत्र 1.9.17.7*
15. *ह्वेनसांग की भारत यात्रा, अनुवादक ठा.प्र.शर्मा, पृष्ठ 106*
16. *अर्थशास्त्र, 2/1/2*
17. *अर्थशास्त्र, 7/11/21*
18. *अर्थशास्त्र, 6/1/8*
19. *अर्थशास्त्र, 2/14*
20. *शर्मा, ह्वेनसांग की भारत यात्रा, 147*
21. *अर्थशास्त्र, 2/4/21*
22. *अर्थशास्त्र, 2/35*
23. *अर्थशास्त्र, 2/15*
24. *वाटर्स, ऑन युवान चुआंग ट्रेवल्स इन इण्डिया 1, पृष्ठ 168*
25. *याज्ञवल्क्य, 11, 195*
26. *बृहस्पति, संस्कार, श्लोक 530*
27. *विष्णु पुराणा, 3, 8.32–33*
28. *महाभारत, शान्तिपर्व, 294.4*
29. *गाइल्स, ट्रेवल्स ऑफ फाहियान, पृष्ठ 21*
30. *मनुस्मृति 10.12*
31. *बील, फाहियान, बुद्धिस्ट रिकॉर्ड आफ वेस्टर्न वर्ल्ड, पृष्ठ 16*
32. *याज्ञवल्क्य, 1/93*
33. *मनुस्मृति, 10/51–56*
34. *वाटर्स, टी, ऑन युवांग – च्वांग्स ट्रेवल्स इन इण्डिया, भाग–1, पृष्ठ 147*
35. *कादम्बरी, प्रथम अध्याय, पृष्ठ 20–21*
36. *शांखायन, गह्यसूत्र 4, 7.33*
37. *ऐतरेय ब्राह्मण, 35/3*
38. *तक्कसु, ए रिकॉर्ड ऑफ बुद्धिस्टिक रिलिजन, पृष्ठ 139*
39. *मनुस्मृति, 10.32*
40. *मनुस्मृति, 10.48*
41. *वाटर्स, टी, पूर्वनिर्दिष्ट, पृष्ठ 168*
42. *छान्दोग्योपनिषद, 5.10.7*
43. *वाटर्स, टी., पूर्व निर्दिष्ट, भाग–1, पृष्ठ 322*
44. *ह्वेनसांग की भारत यात्रा, अनु. ठा. प्रसाद शर्मा, पृष्ठ 415*